साहित्य, विचारधारा, राष्ट्रवाद के आइने में विश्वविद्यालय

*डॉ. भरत कुमार

शोध सारांश

जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय–नयी दिल्ली में आयोजित 'The Country without a post office' कार्यक्रम के पश्चात देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन हुआ। इन कार्यक्रमों में राष्ट्रवाद के मायने, विचारधारा, साहित्य और संस्कृति के उपादानों पर चर्चा ने अकादमिक बहसों के साथ–साथ राजनैतिक बहसों को भी जन्म दिया।

राष्ट्रवाद के उदय, भारत में राष्ट्रवाद के मायने, हमारे विश्वविद्यालय तथा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक उपादानों के माध्यम से भारत माता, राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्रीय प्रतीक, गीत का मूल्यांकन आवश्यक हो जाता है। राष्ट्रवाद के सवाल तथा संस्थानों के कार्यों का मूल्यांकन वर्तमान समय में क्यों प्रासंगिक है। इस विषय पर चर्चा शोधपरख चर्चा बेहद आवश्यक है।

Keywords: राष्ट्र, राष्ट्रवाद, एकता, भारत माता, विश्वविद्यालय, साहित्य, संस्कृति, संस्थान, विश्वविद्यालय

देश के शिक्षण संस्थान अशांत है। जेएनयू हो या दिल्ली विश्वविद्यालय, उत्तर में एन.आई.टी. श्री नगर हो या चंडीगढ़ का पंजाब विश्वविद्यालय या उत्तरप्रदेश में अलीगढ़ और बनारस विश्वविद्यालय, दक्षिण में चौन्नई आई.आई. टी हो या हैदराबाद विश्वविद्यालय, पश्चिम में जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय जोधपुर हो या नेशनल फिल्म संस्थान पूना, पूर्व में शांतिनिकेतन हो या जादवपुर विश्वविद्यालय। इन सभी शिक्षण संस्थानों में 'राष्ट्रवाद, स्वायत्तता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' के सवालों से सरकारों से लगातार तकरार चल रही है। इस तकरार का असल नुकसान देश की मौजूदा शिक्षण संस्थानों को हो रहा है। शिक्षण संस्थानों की स्वायत्तता, लोकतांत्रिक माहौल और मूलभूत अधिकार हाशिए पर चले जा रहे है। इस दृष्टि से शिक्षण संस्थानों, छात्र संगठनों और सरकार की भूमिका का मूल्यांकन करना आवश्यक है।

विश्वविद्यालयों की भूमिका के संबंध में जेएनयू का विचार वाक्य याद करने की जरुरत है जो कहता है कि "विश्वविद्यालय मानवतावाद, सहिष्णुता, तर्क, वैचारिक सूझ–बूझ और सत्य की खोज के लिए काम करते है। वे मानव जाति द्वारा उच्च से उच्चतर उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रेरक होते हैं। विश्वविद्यालय अपने कर्तव्य का निर्वाह सही रुप में करे तो राष्ट्र और जनता लाभान्वित होगी" जवाहरलाल नेहरु के विचार वाक्य को आदर्श मानकर वैचारिक स्वतंत्रता के वाहक के रुप में जेएनयू की स्थापना हुई। देश के नीति–निर्माताओं का मानना था कि शिक्षण संस्थानों को स्वायत्तता प्रदान करते हुए राजनैतिक दखलअंदाजी से प्रभावित नहीं करना चाहिए लेकिन इसके उलट सभी सरकारे, छात्रसंगठन और प्रशासन राजनैतिक रुप से विश्वविद्यालयों को चलाने का प्रयास करते है जिनके परिणामस्वरुप

हैदराबाद विश्वविद्यालय में रोहित वेमुला और अप्पा रॉव पोड़िल की लड़ाई जगजाहिर हुई। राष्ट्रीय फिल्म संस्थान, पूणें में गजेन्द्र चौहान और छात्रों की तकरार लंबे समय तक चली और अन्य विश्वविद्यालयों में राष्ट्रवाद के सवाल, सरकार से छात्रों की तकरार दृष्टिगोचर होती है। इसके पक्ष और विपक्ष दोनों के वाहक अपने–अपने ठोस तर्कों के आधार पर अपनी बात सिद्ध करने के लिए आमादा रहते है। ऐसे में पिछले एक वर्ष की शिक्षण संस्थानों में घटित घटनाओं की पड़ताल करना लाजमी होगा। गौरतलब है कि 9 फरवरी 2016 को जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में कश्मीरी छात्रों द्वारा "The Country without a post office" नाम से कार्यक्रम आयोजित किया जाता है। जिसमें फांसी की सजा के विरुद्ध साहित्यिक–सांस्कृतिक गतिविधियों को पेश करते है।

इस दौरान कुछ असमाजिक तत्वों द्वारा राष्ट्रविरोधी नारे लगाए गए। जो संपूर्ण विवाद का कारण बना। जिसमें जेएनयू के छात्रसंघ अध्यक्ष कन्हैया कुमार को भी गिरफ्तार किया गया। जिसके बाद महीनों तक जेएनयू अशांत रहा। एक साल बाद जांच संस्थाओं द्वारा कोर्ट में आरोप पत्र पेश किया गया। जिसमें कहा गया कि कन्हैया कुमार द्वारा जेएनयू में कोई देश विरोधी नारे नहीं लगाए गए तथा जो वीडियों प्रचारित हुए हुए उनके साथ छेड़छाड़ की गयी थी। ऐसे में सवाल उठते है कि क्या वास्तव में राष्ट्रविरोधी नारे लगाने वाले लोगों की पहचान की गई? क्या जेएनयू के तोड़–मरोड़ कर वीडियों बनाने वाले समाचार चौनलों पर कार्यवाहीं की गई? क्या इस घटनाक्रम के नाम पर जेएनयू में होने वाले साहित्यिक–सांस्कृतिक–राजनैतिक कार्यक्रमों पर रोक लगाना जायज है?

जेएनयू की तरह दिल्ली विश्वविद्यालय से संबंधित रामजस महाविद्यालय में आयोजित संगोष्ठी में हिंसात्मक घटनाक्रम हुआ। दक्षिणपंथी संगठनों द्वारा कहा गया कि जैसा जेएनयू में राष्ट्रविरोधी कार्य शाहला राशिद और उमर ने किया वैसा ही कार्य दिल्ली विश्वविद्यालय में नहीं होने देंगे। दक्षिणपंथी संगठनों का मानना था कि जेएनयू में देश विरोधी नारे लगाए गए इस कारण से वहाँ के छात्रनेताओं और शिक्षकों को दिल्ली विश्वविद्यालय और देश के दूसरे विश्वविद्यालयों में नहीं बोलने दिया जाएगा। वहीं कार्यक्रम आयोजकों का मानना है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और विश्वविद्यालय की स्वायत्तता के अधिकार की रक्षा के लिए संगोष्ठी, कार्यक्रम आदी होने चाहिए।

रामजस कॉलेज की तरह ही जोधपुर में स्थित जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय में 'साहित्य के माध्यम से इतिहास का पुर्ननिर्माण: राष्ट्र, अस्मिता और संस्कृति' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया। जिसमें प्रो. निवेदिता मेनन ने भारत माता की दो छवियों का तुलनात्मक अध्ययन किया। एक भारत माता की छवि लाल रत्नाकर द्वारा बनाई गयी है तथा दूसरी छवि में भारत माता की छवि 'सिंह पर सवार' की है। लाल रत्नाकार की भारत माता 'दलित–आदिवासी' पृष्ठभूमि की महिला है। जिसके सिर पर बर्तन है और पीछे भैंस खड़ी है लेकिन उसके हाथ में तिरंगा है। इन दो छवियों को मार्क्स–एंगल्स की दृष्टि से देखे तो "विचारधारा केवल विचारों की धारा नहीं बल्कि उसमें आस्था विश्वास और मूल्य चेतना का भी योग होता है। " यानि एक छवि में सनातन संस्कृति के परम्परागत स्वरुप के दर्शन हेतु है वहीं दूसरी कर्म प्रधान समाज की छवि है जिसमें उनके कार्यों का प्रतिरुप दृष्ठिगोचर होता है। उपरोक्त दो छवियाँ दो सांस्कृतिक समाजों को प्रतिबिंबित करती है। एक समाज धर्म के स्वरुप को स्वीकारते हुए माँ दुर्गा की छवि से भारत माता की छवि की निर्मित करता है। वहीं वंचित समुदाय कर्म के स्वरुप को स्वीकार करते हुए वंचित समुदाय को प्रतिबिंबित करते हुए भारत माता की छवि का निर्माण करता है। यह न केवल वैचारिक आग्रह के दो किनारे है बल्कि आस्था और चेतना के भी दो स्तर है।

इसके साथ ही हिमालय पत्रिका में प्रकाशित भारत के नक्शा जो NCERT की किताबों का भी हिस्सा है। यह नक्शा उल्टा था इसके माध्यम से उन्होंने कहा कि भारत एक शरीर नहीं बल्कि खुली आबो–हवा का देश है। जिसमें अंतिम व्यक्ति और दबे–कुचले लोगों को अधिकार देने से ही सच्चा राष्ट्रवाद आ सकता है केवल नारों–बहसों से राष्ट्रवाद का विकास नहीं होगा। इस संगोष्ठी में भारत माता की तस्वीर–नक्शे और अन्य मुद्दे पर हुई समाचार पत्रों में प्रकाशित खबरों की तकरार राष्ट्रवाद और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के सवालों से टकराने लगे। इसे विचारधारा के अर्थ में समझे तो मार्क्स और एंगेल्स ने 'जर्मन आइडियोलॉजी' में बताया है कि "मनुष्य और उसकी परिस्थितियाँ सिर नीचे, पैर ऊपर दिखाई देती हैं।' जर्मन विचारधारा में मार्क्स ने विचारधारा को 'छदम चेतना' कहा है जिसमें कल्पना का प्राधान्य होता है तथा वह भ्रम पर आधार पर आधारित होती है। "उन्होंने यह भी लिखा है कि विचारधारा में यथार्थ के वास्तविक बोध के बदले तथार्थ का भ्रम अधिक होता है। विचारधारा की इस धारणा के अनुसार विचारधारा का यथार्थ से संबंध होता है, भले ही उसमें यथार्थ का उल्टा प्रतिबिंब हो। ऐसी विचारधारा की भी एक सामाजिक भूमिका होती है और उसमें जीवन स्थितियों का प्रतिबिंब होता है। यह ध्यान देने लायक बात है कि 'जर्मन विचारधारा' में जहाँ मार्क्स, एंगेल्स ने विचारधारा को भ्रम, छद्म चेतना, यथार्थ का उल्टा प्रतिबिंद अवास्तिक आदि कहा है वहाँ मुख्य रुप से धर्म औऱ दर्शन की चर्चा की है, कला और साहित्य की नहीं। "

हमें 'भारत माता की छवि' के रुप में देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु की पुस्तक '*भारत एक खोज* ' के प्रथम अध्याय 'भारत माता की जय' का अवश्य अध्ययन करना चाहिए। जिसमें वे कहते है कि 'आप अक्सर भारत माता की जय का नारा लगाते है। ये भारत माता कौन है तो इस पर कोई जवाब नहीं मिला तो नेहरु बोले हमारे पहाड़, नदियां, जंगल, जमीन, वन संपदा, खनिज यहीं तो भारत माता है।बआप भारत माता की जय का नारा लगता है तो आप हमारे प्राकृतिक संसाधनों की जय करते हैं। नेहरु कहते थे "हिंदुस्तान एक खूबसूरत औरत नहीं है। नंगे किसान हिंदुस्तान है। वे न तो खूबसूरत है, न देखने में अच्छे है–क्योंकि गरीबी अच्छी चीज नहीं है, वह बुरी चीज है। इसलिए जब आप भारत माता की जय कहते है दृ तो याद रखिए कि भारत क्या है, और भारत के लोग निहायत बुरी हालत में हैं, चाहे वे किसान हों, मजदूर हों, खुदरा माल बेचने वाले दुकानदार हों, और चाहे हमारे कुछ नौजवान हों। " इस छवि के रुप में नेहरु अंग्रेजों द्वारा भारत में हो रहे शोषण को रेखांकित करते हुए भारत माता की छवि की निर्मिति कर रहे है। वे कहते है जब तक संविधान आधारित स्वत्रंत राष्ट्र के रुप में भारत की निर्मित नहीं होती तब तक भारत के किसान, मजदूर, दुकानदार और हर नागरिक संकट में है, यानि भारत माता संकट में है।

नेशनल फिल्म संस्थान पूणें में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक स्वतंत्रता तथा विद्यार्थी एवं शिक्षकों के लिए स्वायत्तता और अधिकार की रक्षा करते हुए आंदोलन किया। इस दौरान वहाँ के विद्यार्थियों ने सरकार की नीतियों को संस्थान के लिए उचित ना मानते हुए अपनी राय प्रकट की। विद्यार्थियों ने फिल्म संस्थान में अभिनेता गजेन्द्र चौहान की नियुक्ति के खिलाफ छात्रों ने आवाज उठाई। जिसमें देश के नेता, रंगकर्मी और सिने कर्मीयों ने ने अपनी बेबाक राय रखी। गजेन्द्र चौहान का कुछ नहीं हुआ लेकिन संस्थान में कहीं दिनों तक कक्षाओं का संचालन नहीं हुआ तथा संस्थान की छवि को होने वाले नुकसान की आज तक भरपाई नहीं हो पाई।

उपरोक्त उदाहरणों राष्ट्रवाद से संस्थान–संस्कृति एवं साहित्य पर पड़ने वाले प्रभावों को समझना चाहिए। इन घटनाक्रम को राष्ट्रवाद के इतिहास के साथ समझने का प्रयास करें तो वर्तमान दौर को संजीदगी के साथ समझ सकते है। गौरतलब है कि राष्ट्रवाद की विचारधारा का उदय अठारहवीं सदी से माना जाता है। पश्चिमी विचारकों ने उन्नीसवीं सदी को राष्ट्रवाद की शती कहा है। राष्ट्रवादी भावना के विकास का मुख्य कारण विदेशी साम्राज्यवादी शक्ति का विरोध है। आधुनिक राष्ट्रवाद के जन्म के संबंध में बर्टेंड रसेल ने लिखा है "राष्ट्रवाद का प्रारंभ जॉन ऑफ ऑर्क के समय से माना जा सकता है जब फ्रांसीसियों में अंग्रेजों की विजय के विरुद्ध सामूहिक प्रतिरोधात्मक भावना जाग उठी थी "जर्मन और रुसी राष्ट्रवाद का जन्म नेपोलियन के प्रति विरोध से हुआ। अमरीकी राष्ट्रवाद ब्रिटिश फौजियों के प्रतिरोध स्वरुप जन्मा। दुर्भाग्यवश यह एक ऐसी मनौवैज्ञानिक प्राकृतिक गत्यात्मकता है जिसने प्रत्येक दशा में राष्ट्रवाद के विकास को अनुशासित किया है।

राष्ट्रवाद के संबंध में रविन्द्रनाथ टैगोर ने 1917 के 'नेशनलिज्म इन इंडिया' नामक निबंध में राष्ट्रवाद के संबंध में लिखा कि 'राष्ट्रवाद की शक्ति का प्रयोग बाहरी संबंधों के साथ–साथ राष्ट्र की आंतरिक स्थिति को नियंत्रित करने में भी होता है। जिसके परिणामस्वरुप समाज तथा व्यक्ति के निजी जीवन पर राष्ट्र छा जाता है और एक भयावह नियंत्रणकारी स्वरूप प्राप्त कर लेता है। राष्ट्रवाद के नाम पर राज्य शक्ति का अनियंत्रित प्रयोग अनेक अपराधों को जन्म देता है।'

राष्ट्रवाद, स्वायत्तता, साहित्य और अधिकार के सवालों पर विश्वविद्यालय में अंशाति से असल नुकसान छात्रों और शिक्षण संस्थानों को हुआ है। उत्सव और उन्मादधर्मिता के आवरण में शिक्षा के असल सवाल कहीं छिप गए। सत्ता और संगठन विश्वविद्यालयों को अपने कब्जें में लेने के लिए अधिकारों का इस्तेमाल करते है तो छात्र उनके खिलाफ खड़े होकर विरोध दर्शाने का काम करते है। यह विरोध कहीं बार उन्मादधर्मिता और संघर्षों में तब्दील हुआ। जिसे राष्ट्रवाद की सैद्धान्तिक लड़ाई हाशिए पर पहुँच जाती है। शिक्षण संस्थानों के असल सवालों से छात्र और सरकार दूर होने से मूल रुप में राष्ट्र का ही नुकसान होता है । कहीं बार सरकारे राष्ट्रवाद के छद्मम आइने से सैद्धान्तिक और मूलभूत सवालों से भटकाकर छात्र और संस्थानों को उलझाए रखती है ताकि उनके वैचारिक–आर्थिक और राजनैतिक नीतियों पर नागरिकों का ध्यानाकर्षण ना हो। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, शिक्षा बजटों में कमी, निजी शिक्षण संस्थानों का विकास, नित नए पाठ्यक्रमों में होने वाले बदलावों की तरफ किसी का ध्यान ही ना जाए। ऐसे में सबका काम भी बन जाए तो राष्ट्र के असल बुनियादी सवाल उन्मादधर्मिता में हाशिए पर चले जाए।

विश्वविद्यालयों में झंडा लगाना एक राष्ट्र के लिए आवश्यक है लेकिन विश्वविद्यालयों में संसाधन, छात्रवृति, छात्रावास, पेंशन, समय बद्ध नियुक्तियों एवं पद्दोन्ति जैसे सवालों हाशिये पर चले जाते है। मूर्तियों के लिए लाखों का अनुदान देना छद्म राष्ट्रवाद के लिए आवश्यक है लेकिन लोकतांत्रिक राष्ट्र में लोकतांत्रिक रुप से सिंडिकेट का निर्माण करना, एकेडमिक काउन्सिंल और अकादमिक संस्थानों का निर्माण करना प्राथमिकता का हिस्सा नहीं होता है। अनेक शिक्षण संस्थानों तथा सरकारी कंपनियों को स्वायत्तता के नाम पर निजी हाथों में देना छद्म राष्ट्रवाद हो सकता है लेकिन दूरदराज क्षेत्र के महाविद्यालयों में समुचित मात्रा में शिक्षकों की नियुक्ति और बुनियादी सुविधाओं का निर्माण असल राष्ट्रवाद का प्रतिरुप है।

***सहायक आचार्य.**
हिंदी विभाग
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय,
जोधपुर (राज.)

संदर्भ सूची

1 भारत एक खोज– जवाहरलाल नेहरु–16

2 शब्द और कर्म – मैनेजर पाण्डेय पृ. 14

3 शब्द और कर्म– मैनेजर पाण्डेय पृ. 12–13

4 भारत एक खोज – जवाहरलाल नेहरु पृ. 18

5 विवेक या विनाश– बर्ट्रेंड रसेल, (अनुवाद–वीरेन्द्र त्रिपाठी), राजकमल प्रकाशन पृ. 63